स्कन्दगुप्त नाटक में स्कन्दगुप्त का चरित्र-चित्रण

डॉ. ओमवीर सिंह
हिन्दी विभाग
विवेकानन्द कॉलिज, दिल्ली

सारांशिका

सामाजिक और व्यक्तिगत, दोनों ही स्तरों पर स्कन्दगुप्त अन्तर्वाह्य द्वन्द्वों से घिरा हुआ रहता है। वह सामाजिक रुप यदि हूण आक्रमणकारियों से युद्धरत रहता है तो उसमें बार–बार की असफलता, राजनीतिक स्तर पर किये गये अनन्तदेवी और उसके समर्थकों के षड्यन्त्र एवं व्यक्तिगत स्त्र पर प्रेम की असफलता भी स्कन्दगुप्त को द्वन्द्वग्रस्त बनाये रखते हैं। जयशंकर प्रसाद ''नाटककार ने अन्दर्द्वद्व की भूमिका पर (ही) स्कन्द के चरित्र का निर्माण किया है।'' वास्तव में देख जाए तो स्कन्दगुप्त का व्यक्तित्व नाना गुणों से परिपूर्ण है। स्वावलम्बन, आत्मविश्वास, स्वनिर्भरता, उदारता, क्षमा, कर्त्तव्यपरायणता, व्यवहारकुशलता, मातृभक्ति, परिवार–प्रेम, त्याग, दया तथा स्वाभिमाना गुण उसमें दिखलाई पड़ते हैं। वह हूण आक्रमणकारियों का निरन्तर सामना करता रहता है। वह उन पर विजय प्राप्त करता है, अकेले ही संघर्षरत बने रहने को तैयार रहता है।

मुख्य शब्दः नाटक, चरित्र–चित्रण अंतःप्रेरणा, भावुकता, विभुतियाँ

प्रस्तावना

जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित स्कन्दगुप्त नाटक ऐतिहासिक है। इसलिए स्कन्दगुप्त ऐतिहासिक चरित्र है जो ईसा की पाँचवी शताब्दी में मगध–नरेश और गुप्तवंशीय कुमारगुप्त का ज्येष्ठ पुत्र है–युवराज और युवा, जिसने शक–हूण आक्रमणकारियों से मालव–राज्य की रक्षा की थी, उनसे कुमा का युद्ध किया था तथा अन्ततः उनको परास्त करके भारत से बाहर कर दिया था। इसके पश्चात् 'विक्रमादित्य' की उपाधि धारण की थी तथा वाह्य शत्रुओं के लोमहर्षक आक्रमणों के साथ–साथ नाना आन्तरिक और पारिवारिक षड्यन्त्रों का भी सामना करते हुए अपनी वीरता एवं राजनीतिक ज्ञान का परिचय दिया था। इस नाटक–पात्र के रुप में उसमें कुछ ऐसी बातें भी पाते हैं जिनका इतिहास में तो कोई उल्लेख नहीं है लेकिन यहाँ उसमें भरपूर मात्रा में मिलती हैं। स्कन्दगुप्त की अतिशय भावुकता, दार्शनिक चिन्तन तथा देवसेना–विजया सम्बन्धी समस्त प्रेम–प्रसंग ऐसे उदाहरण हैं। नाटककार ने अपनी कल्पना से इनको उसके चरित्र में समाविष्ट किया है। आशय यही है कि नाटक–पात्र के रुप में 'स्कन्दगुप्त' इतिहाससम्मत है। नाटककार द्वारा कल्पित–आरोपित विशेषताओं से युक्त अनेकांश में कल्पना का भी सहारा लिया गया है।

स्कन्दगुप्त एक देश–प्रेमी है। इसलिए नाटक में आद्योपान्त उसका यही वैशिष्ट्य जगह–जगह व्याप्त रुप में देखने को मिलता है। एक सच्चे देशभक्त की तरह विदेशी हूण आक्रमणकारियों तथा उनके द्वारा आये दिन किये जाने वाले नृशंस अत्याचारों को वह न तो उचित समझता है और न उसे सहन कर पाता है। इसलिए वह मालव राज्य की उनसे रक्षा करता है। वह अनेक कष्ट सहकर भी उनसे बारम्बार लोहा लेता है। वह अन्ततः कुमा के युद्ध में उनको, क्षमादान करते हुये, भारत से बाहर कर देता है। वह सहन नहीं कर पाता कि ''सिंहों की विहारस्थली (भारत) में श्रृंगाल वृन्द (हूण आक्रमणकारी) सड़ी लोथ नोच रहे हैं।'' वह न तो कोई अधिकार चाहता है, न पद अथवा यश–प्रशंसा वरन् दूसरी ओर हूण–अत्याचारों को देख–सुनकर आवेश और दुखपूर्वक यही कहता है–''आर्य साम्राज्य का नाश इन्हीं आँखों को देखता है। हृदय काँप उठता है, देशाभिमान गरजने लगता है। मेरा स्वत्व न हो, मुझे अधिकार की आवश्यकता नहीं। यह नीति और सरदारों का महान् आश्रय वृक्ष, गुप्त साम्राज्य, हरा–भरा रहे और कोई भी इसका उपयुक्त रक्षक हो।''1 देश–रक्षा के लिये ही वह स्वयं सन्नद्ध होता है, अनेक अन्तर्वाह्य षड्यन्त्र–संघर्ष सहन नहीं करता है। वह यही घोषणा करता है कि–''भटार्क ! यदि कोई साथी न मिला तो साम्राज्य के लिये नहीं, जन्म–भूमि के उद्धार के लिये मैं अकेला युद्ध करुँगा।'' तथा ''देखना, मेरे बाद जन्म–भूमि की दुर्दशा न हो।'' शरीर देकर भी यदि हो सका तो जन्म–भूमि का उद्धार कर दूँगा।'' उसके इस देश–प्रेम के वैशिष्ट्य का संकेत देते हुये, डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा ठीक ही लिखा है–''उसका देश–प्रेम किसी की सहायता अथवा सैन्य बल पर आश्रित नहीं है। उसकी मूल भीत्ति आत्मविश्वासपूर्ण निःस्वार्थ और मंगलमयी वह अन्त–प्रेरणा है जिसके कारण स्कन्द का व्यक्तित्व सुन्दर हो उठा है।'' निःसन्देह, वह ''जन्म–भूमि सर्वादपि गरीयसी'' का उपासक है तथा उसकी रक्षार्थ प्राणों की बाजी तक लगाता रहता है–बारम्बार।''2 क्षत्रिय कुल और उच्च राजवंश में जन्मे, क्षत्रिधर्म शिक्षा प्राप्त तथा श्रेष्ठ देश–प्रेमी स्कन्दगुप्त के लिये अतिशय वीर होना स्वाभाविक ही है। सच्चे वीर वाले साहस, निर्भयता, आवेश, उत्साह, ओज और सैन्य–कला–विशादर आदि अनेक गुणों के प्रमाण वह देता रहता है। मालव–नरेश बन्धुवर्मा की सहायता–याचना पर उसका तुरन्त मालव पहुँचना हो अथवा फिर माता देवकी की रक्षार्थ मगध जा पहुँचना, खिंगल जैसे आततायी आक्रमणकारी का सामना करना हो या कुमा के युद्ध में असफल रह जाने पर भी पुनः सैन्य शक्ति एकत्रित करना, देवसेना, बन्धुवर्मा, विजया, पर्णदत्त, धातुसेना, मातृगुप्त और अन्ततः भटार्क तक को साथ लेकर, 'ब्रूटस' की तरह बारम्बार शत्रु आक्रमणकारियों से लोहा लेते रहता है। जनसामन्य तक को प्रेरित–उत्साहित तथा जाग्रत करना, उसके यह सभी कार्य उसकी वीरता के परिचायक हैं। उसके कथन भी क्षत्रीय धर्म के लक्षण है यथा–''शरणागत की रक्षा भी क्षत्रिय का धर्म है,'' ''..... अकेला स्कन्दगुप्त मालव की रक्षा करने के लिये सन्नद्ध है'', ''हम तो

साम्राज्य के एक सैनिक हैं'', ''..... मैं अकेला युद्ध करुँगा आदि।''3 अपने व्यक्तिगत जीवन में स्कन्दगुप्त असामान्य रुप से भावुक बना रहता है। इसलिए चिन्तन प्रवृत्ति भी रखता है। उसकी गम्भीरता तथा अनेक बार की असफलतायें, प्रणयगत पराजय एवं उसके विरुद्ध किये गये अनन्तदेवी–पुरगुप्त आदि पारिवारिक लोगों के षड्यन्त्र तथा वाह्यातः हूणों से प्राप्त पराजय तथा समाजव्यापी बौद्ध–ब्राह्मण–संघर्ष भी इन वैशिष्ट्यों को और भी अधिक महत्व चढ़ा देते हैं। वह प्रारम्भ से ही प्रायः उदासीन हुआ–सा दिखाई पड़ता है। क्षत्रियोचित युवराज वाली–गरिमा और अपने अधिकार को लेकर बरती जाने वाली विद्रोहात्मक प्रकृति उसमें दूर–दूर तक दिखलाई नहीं पड़ती है। वह तो सोचता है कि–''अधिकार सुख कितना मादक और सारहीन है'', ''चेतना कहलाती है कि–तू राजा है और उत्तर में जैसे कोई कहता है–तू खिलौना है, उसी खिलवाड़ी वटपत्रशायी'' आदि नाना प्रसंग उसके इन्हीं वैशिष्ट्यों को व्यक्त करने वाले हैं। यहाँ तक कि अन्त में भी वह यही निर्णय लेता है कि, ''देवसेना ! तुम जाओ–हतभाग्य स्कन्दगुप्त ! अकेला स्कन्द–ओह !''4

स्कन्दगुप्त की अतिशय निराशा एवं इस अकेले रह जाने का मूल कारण उसकी प्रेम में प्राप्त असफलता है। इसलिए देवसेना उससे प्राभावित होती है और उसे प्रेम करती है, जिसको वह काफी समय तक नहीं जान पाता। दूसरी ओर, वह विजया से प्रेम करता है किन्तु एकदम आदर्श और मर्यादित, यद्यपि स्वयं विजया कालान्तर में भटार्क

की ओर खिंच जाती है। इन दो नारियों का सम्पर्क ही एक ओर तो स्कन्द को अन्तर्द्वद्वग्रस्त करता है तो दूसरी ओर अन्ततः वह देवसेना की ओर उन्मुख होता है। वह स्वयं में विजया का अधिकार छीनना नहीं चाहती और आजीवन कौमार्य–व्रत लेकर स्कन्द को निराशा करती है और प्रेम में असफल भी। अन्ततः उसको भी अकेलापन और ब्रह्मचर्य का व्रत ही धारण करता है। अतः सामाजिक और व्यक्तिगत, दोनों ही स्तरों पर स्कन्दगुप्त अन्तर्वाह्य द्वन्द्वों से घिरा हुआ रहता है। वह सामाजिक रुप यदि हूण आक्रमणकारियों से युद्धरत रहता है तो उसमें बार–बार की असफलता, राजनीतिक स्तर पर किये गये अनन्तदेवी और उसके समर्थकों के षड्यन्त्र एवं व्यक्तिगत स्त्र पर प्रेम की असफलता भी स्कन्दगुप्त को द्वन्द्वग्रस्त बनाये रखते हैं। जयशंकर प्रसाद ''नाटककार ने अन्दर्द्वद्व की भूमिका पर (ही) स्कन्द के चरित्र का निर्माण किया है।'' वास्तव में देख जाए तो स्कन्दगुप्त का व्यक्तित्व नाना गुणों से परिपूर्ण है। स्वावलम्बन, आत्मविश्वास, स्वनिर्भरता, उदारता, क्षमा, कर्त्तव्यपरायणता, व्यवहारकुशलता, मातृभक्ति, परिवार–प्रेम, त्याग, दया तथा स्वाभिमाना गुण उसमें दिखलाई पड़ते हैं। वह हूण आक्रमणकारियों का निरन्तर सामना करता रहता है। वह उन पर विजय प्राप्त करता है, अकेले ही संघर्षरत बने रहने को तैयार रहता है। मालव को सुरक्षित करना, खिंगल जैसों को क्षमादान करना, भटार्क तक को स्वीकार कर लेता है, पुरगुप्त को राज्य सौंपना, स्वयं को एक साम्राज्य–सैनिक और रक्षक मानकर सक्रिय बने रहना, देवसेना प्रदत्त आर्थिक सहायता को अस्वीकार करना, बन्धुवर्मा और मातृगुप्त की सहायता करना, चक्रपालित तक को स्वीकार करना, देवकी की प्राण–रक्षा करता है। वह फिर भी स्वयं एकाकी, जीर्ण–शीर्ण रहकर ब्रह्मचर्य–व्रत धारण करता है। इस सम्बन्ध में डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा ने कहा है कि ''उसके आचरण की यही दिव्यता चरित्र के मंगल विधायक अलौकिक भारतीय शील का प्राण है।''5 नाटक के अधिकांश पक्ष–विपक्ष के पात्रों के ही नहीं, दर्शकवृन्द तक को वह अपने इस व्यक्तित्व से आकर्षित–प्रभावित करता है। वह शक्ति, शील और सौन्दर्य का निधान है–सुन्दर–भव्य मूर्ति, देवोपम सौन्दर्य वाला, आकर्षक और प्रभावशाली व्यक्तित्व स्कन्दगुप्त का है।

अतः शास्त्रीय दृष्टि से देखा जाए तो धीरोदात्त वर्ग के नायक में कुछ आवश्यक गुणों का होना अनिवार्य है जैसे राजकुलोत्पन्न, भव्य व्यक्तित्व का धनी, चारित्रिक गुणों से सम्पन्न तथा वीर, कर्त्तव्यनिष्ठ, दृढ़प्रतिज्ञ, धार्मिक वृत्ति सम्पन्न, सतत कर्मनिष्ठ तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व इसी तरह, वह कथातत्व को अग्रसर करने वाला, आधिकारिक कथा से सर्वाधिक और प्रत्यक्षतः सम्बद्ध, सर्वाधिक प्रभावशाली एवं फलागम प्राप्ति करने वाला होता है। इसलिए स्कन्दगुप्त नाटक में स्कन्दगुप्त ही इन सब लक्षणों से सुसज्जित है। नाटक का नामकरण भी उसके नाम पर है। डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा ने कहा है–''वह सच्चा कर्मवीर और उदात्त चरित्र का व्यक्ति है। उसमें कुल–शील की उत्तमता के साथ शान्त प्रकृति और गम्भीर भावनाओं का सुन्दर योग प्राप्त होता है। देवोपम मानव–चरित्र की सम्पूर्ण विभूतियों का उसमें समन्वय है। वह अपनी निर्लिप्त कर्मवीरता के बल पर हमारी श्रद्धा और भक्ति का आलम्बन बन जाता है। उसको देखकर इतिहास तो भूल जाता है परन्तु उसका व्यक्तित्व हमारे मानस से अमर हो उठता है। नाटककार ने उसमें पाश्चात्य व्यक्तिवैचित्रयवाद और भारतीय साधारणीकरण का सुन्दर समन्वय किया है। सम्पूर्ण नाटक में उसका व्यक्तित्व प्रधान है।''6 पर्णदत्त के शब्दों में वह ''गुप्तकुल भूषण है'' तो मालवदूत के अनुसार ''आर्य साम्राज्य का एकमात्र भरोसा'', बन्धुवर्मा उसको ''उदार, वीर हृदय, देवोपम सौन्दर्य, इस आर्यावर्त्त का एकमात्र आशास्थल'' कहता है तो भटार्क ''महान''। विजया के लिये वह ''सुन्दर मूर्ति'' है। देवसेना के लिये ''इस जीवन का देवता और उस जीवन का प्राप्य'' तक है। यहाँ तक कि उसकी विमाता अनन्तदेवी, परम कुचक्री शर्वनाग और हूण आक्रमणकारी खिंगल तक भी उससे क्षमा–याचना करते हैं तो पुरगुप्त को तो वह स्वयं ही अपना समस्त राज्याधिकार सौंप देता है। वह एकदम निस्पृह और वीतरागी बनकर शेष जीवनांश गुजारता है। इसलिए स्कन्दगुप्त धीरोदात नायक सिद्ध होता है। इस सम्बन्ध में डॉ. बच्चन सिंह ने हिन्दी नाटक में ठीक लिखा है कि निःसन्देह, ''..... ऐसे उत्तम चरित्र की सर्जना केवल प्रसाद जी जैसे नाटककार के लिये ही सम्भव थी और उसमें वे एकदम पूर्णतः सफल रहे हैं।''7

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. जयशंकर प्रसाद – स्कन्दगुप्त नाटक

2. डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा – प्रसाद के नाटकों का शास्त्रीय अध्ययन पृ. सं. 41

3. जयशंकर प्रसाद – स्कन्दगुप्त नाटक

4. जयशंकर प्रसाद – स्कन्दगुप्त नाटक

5. डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा – प्रसाद के नाटकों का शास्त्रीय अध्ययन पृ. सं. 67

6. जयशंकर प्रसाद – स्कन्दगुप्त नाटक

7. डॉ. बच्चन सिंह – हिन्दी नाटक पृ. सं. 35